International Journal of Hindi Research
www.hindijournal.com
ISSN: 2455-2232
Received: 23-10-2023, Accepted: 08-11-2023, Published: 24-11-2023
Volume 9, Issue 6, 2023, Page No. 4-7

'उत्तरा' महिला पत्रिका में प्रकाशित कविताएं–एक विश्लेषण

निरुपमा तिवारी
सहायक प्राध्यापक, हिन्दी विभाग, राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय चम्पावत, उत्तराखंड, भारत

सारांश
कविताएं मानव अनुभूतियों, भावनाओं को व्यक्त करने का सशक्त माध्यम हैं।साहित्यिक पत्र पत्रिकाओं में प्रकाशित लेख जहाँ समाज को वैचारिक दृष्टिकोण से उन्नत बनाते हैं वहीं उन पत्रिकाओं में प्रकाशित कविताएं मानवीय भावनाओं तथा अनुभूतियों की अभिव्यक्ति के द्वारा समाज के हृदय को झकझोरने का कार्य करती हैं।साहित्य के दोनो क्षेत्र गद्य और काव्य उन्नत समाज के निर्माण में अपनी विशिष्ट भूमिका निभाते हैं। ष्उत्तराष् महिला पत्रिका में प्रकाशित कविताएं भी इन्ही उच्च साहित्यिक आदर्शों को प्राप्त करने की दिशा में अग्रसर हैं। महिला विमर्श पर आधारित इस पत्रिका में नारी जीवन तथा समाज से जुड़े विभिन्न विषयों को मौलिक दृष्टिकोण से सामने लाया जाता रहा है।इस पत्रिका में प्रकाशित कविताएं पर्वतीय नारी के संघर्षशील जीवन से जुड़ी सभी परिस्थितियों को स्वर दे रहीं हैं। इन कविताओं में हमें नारी चेतना तथा परंपराओं से विद्रोह का भाव मुखर रूप में दिखाई पढ़ता है।

मूल शब्दः 'उत्तरा' महिला पत्रिका, प्रकाशित, कविता, विश्लेषण।

कविताएं पाठको के अंत करण को छूने का प्रयास करती है, कविता कवि की भावनाओं, अनुभूतियों को व्यक्त करने का एक सशक्त माध्यम है। आचार्य रामचंद्र शुक्ल के अनुसार–

"कविता से मनुष्य भाव की रक्षा होती है सृष्टि के पदार्थ या व्यापार विशेष को कविता इस तरह से व्यक्त करती है कि मानो वे पदार्थ या व्यापार विशेष नेत्रों के सामने नाचने लगते हैं। वह मूर्तिमान दिखाई देने लगते है उनकी उत्तमता या अनुतमता का विवेचन करने में बुद्धि से काम लेने क जरूरत नहीं पड़ती। कविता की प्रेरणा से मनुष्यों के प्रवाह जोर से बहने लगते हैं।"

प्रत्येक कार्य के पीछे कोई ना कोई उद्देश्य अवश्य रहता है; इसीलिए किसी भी पत्रिका के प्रकाशन से के पीछे बहुत से अनेक ऐसे कारण होते हैं जो उन्हें प्रेरित करते हैं कि अपनी बात समाज तक पहुंचाई जाए। इन पत्रिकाओं में प्रकाशित होने वाले लेख, कहानी, कविताओं के माध्यम से कवि, लेखक, प्रकाशक, संपादक अपनी उन बातों को समाज तक पहुंचाने का कार्य करते हैं जिन्हें वे समाज के लिए आवश्यक मानते हैं ,समाज को नई दिशा देने में, समाज की बुराइयों को दूर करने में,. समाज में जागरूकता लाने के लिए, समाज में घटने वाली घटनाओं से अवगत कराने के लिए तथा उन घटनाओं के वास्तविक कारणों के प्रति चिंतन और मनन करने के लिए यह पत्रिकाएं ही आधार बनती 'है

'उत्तरा महिला पत्रिका' भी ऐसे तमाम उद्देश्यों को लेकर अस्तित्व में आई और उन सभी पहलुओं को इस पत्रिका में ने सामने लाने का प्रयास किया जिस पर पहले बहुत कम सोचा गया था; जैसे– समाज में महिलाओं की दोयम दर्जे की स्थिति, उनकी तकलीफें तथा अपने अस्तित्व को लेकर स्त्रियों का जीवन संघर्ष, साथ ही समाज में घटने वाले घटनाक्रम जैसे उत्तराखंड राज्य आंदोलन, पर्यावरण संरक्षण, स्त्रियों के साथ हिंसा, लोकजीवन, नोटबंदी, खेती किसानी आदि विषय। समाज को जागरूक बनाने के उद्देश्य से यह पत्रिका एक मशाल की तरह प्रज्ज्वलित होकर समाज में व्याप्त बुराइयों तथा विषमताओं के अंधकार को दूर करने के लिए सतत प्रयत्नशील है। इस पत्रिका में प्रकाशित कविताएं भी इन्ही उद्देश्यों को हृदय में छुपा कर रची गई है; जो कि बौद्धिक चिंतन से अलग हटकर हृदय की भावनाओं को झकझोरने में समर्थ है।

उत्तराखंड से प्रकाशित होने वाली हिन्दी पत्रिकाओं की श्रृंखला में उत्तरा महिला पत्रिका' उत्तराखंड के नैनीताल में परिक्रमा, तल्ला डांडा से प्रकाशित होने वाली प्रतिष्ठित महिला पत्रिका है। 1990 में डॉ० उमा भट्ट, शीता रजवार, कमला पंत और बसंती पाठक ने महिलाओं और उनसे जुड़े मुद्दों तथा सामाजिक विषयों पर आधारित क्षेत्र की पहली महिला पत्रिका 'उत्तरा' की स्थापना की, जिसका अर्थ है "उत्तर का। 'उत्तरा पत्रिका' की प्रमुख संपादक डॉक्टर उमा भट्ट हैं शीला रजवाल, कमला पंत और बसंती पाठक जैसी विदुषी महिलाएं साथ मिलकर डॉ उमा भट्ट ने आम महिलाओं की उन कहानियों को चित्रित किया गया है जोकि सामाजिक वर्जनाओं को चुनौती देने की हिम्मत करती हैं।

उत्तरा पत्रिका ने उत्तराखंड में रहने वाली महिलाओं को आवाज देने में मदद की है, महिलाओं के समान अधिकार के साथ–साथ समर्थन और सम्मान की वकालत की है। उत्तरा महिला पत्रिका का पहला अंक अक्टूबर 1990 में नैनीताल से प्रकाशित हुआ तब से यह निरंतर प्रगति के पथ पर अग्रसर है। तब से यह निरंतरप्रगति के पथ पर अग्रसर है।अब तक इसके 127 अंक प्रकाशित हो चुके हैं। आरंभ में उत्तर पत्रिका का प्रकाशन ओम प्रिंटिंग प्रेस मेरठ के द्वारा किया जाता था वर्तमान में यह सरस्वती प्रेस देहरादून से प्रकाशित होती है यह एक त्रैमासिक पत्रिका है जिसका संपूर्ण विषय नारी विमर्श है।नारी सरोकारों से जुड़ी हुई इस पत्रिका की वास्तव में शुरुआत ही महिलाओं के समूह के द्वारा की गई थी।यह पत्रिका प्रायः 40 या 52 पृष्ठों की निकलती है इस पत्रिका का मुख्य उद्देश्य समाज में महिलाओं की भूमिका को सामने लाना है। उत्तरा एक ऐसी महिला पत्रिका है जिसके लेखन में सभी वर्ग के लोग शामिल हैं। पत्रिका में साहित्य की सभी विधाओं जैसे कविता, कहानी, साक्षात्कार, समसामयिक विषयों पर लेख तथा रिपोर्ट आदि को प्रकाशित किया जाता है । समाज के ज्वलंत मुद्दों तथा समसामयिक विषयों पर आधारित लेख जागरूक समाज के सदस्यों को नवीन दृष्टिकोण से सोचने का आधार प्रस्तुत करते हैं।[1]

विषयानुसार 'उत्तरा' की कविताओं का विश्लेषण

वर्तमान समय में कविताओं का विषय क्षेत्र अत्यंत व्यापक हो गया है।आज जीवन का कोई भी क्षेत्र ऐसा नहीं है जिस पर कविताएं ना लिखी जाती हों। आज का कवियों द्वारा कल्पना लोक से उतर कर आधुनिक भाव बोध से संपृक्त मानव अनुभूतियों, भावनाओं, जीवन संघर्ष तथा समस्याओं पर यथार्थपरक कविताएं

लिखी जा रही हैं। 'उत्तरा महिला पत्रिका' में भी हमें इन सभी विषयों पर आधारित कवितायें दिखाई पड़ती है । हालांकि यह भी स्पष्ट है कि 'उत्तरा महिला पत्रिका' जो कि महिला विमर्श पर आधारित पत्रिका है, यह महिलाओं के मूल लोकतांत्रिक अधिकारों की सभी स्तरों पर उपलब्धता की वकालत करती है। यह पत्रिका महिलाओं के अंतर्मन की आवाज को सामने रखती है, इसलिए इस पत्रिका की प्रत्येक कविता में महिला कहीं ना कहीं अवश्य विद्यमान होती है।इस पत्रिका में प्रकाशित कविताओं का वर्गीकरण विषयानुसार निम्न शीर्षकों में किया जा सकता है:.

स्त्री चेतना की कविताएं

उत्तरा महिला पत्रिका की कविताओं में स्त्री चेतना सर्वत्र विद्यमान है।आधुनिक युग में स्त्री विमर्श व स्त्री चेतना सदियों से हो रहे स्त्री शोषण और उसके प्रति जागरुकता का परिणाम है। उत्तरा महिला पत्रिका में प्रकाशित कविताओं में नारी, स्वतंत्रता एवं अस्मिता की तलाश करती हुई दिखाई पड़ती है। उसके लिए अनेक चुनौतियां हैं उसे अपने हक एवं अधिकार के लिए संघर्ष करना है। ये कविताएं नारी ह्रदय के उन पहलुओं को स्पर्श करती हैं, उन भावनाओं को व्यक्त करती हैं जिन्हें नारी खुले रुप से व्यक्त नहीं कर पाती। यह कविताएं स्त्रियों का नेतृत्व करती हैं, उनकी समस्याओं, उनकी वेदनाओं, उनकी इच्छाओं आदि नारी ह्रदय के अनछुए पहलू का साक्षात्कार हम इन कविताओं के माध्यम से कर पाते हैं।

जिस स्त्री को पुरुषों ने सदियों से सम्मान की दृष्टि से ना देखा,उसे सामाजिक एवं पारिवारिक हक अधिकारों से वंचित करने का प्रयास किया, वास्तव में उस स्त्री के बिना परिवार और समाज की कल्पना करना भी असंभव है। जिन पुरुषों ने स्त्री को सम्मान न देकर उसे अपमानित किया है या उसके अस्तित्व को नकारा है वह कैसे भूल जाते हैं कि स्त्री ने ही तो एक मां, बहन, बेटी, पत्नी के रूप में उसके अस्तित्व को बचाए रखा है। वह क्यों भूल जाता है? कि एक स्त्री, मां के रूप में उसकी हर दिन सुरक्षा और सफलता की कामना करती है, वह उस स्त्री को कैसे कम आंक सकता है जिसके बिना ये भरा पूरा संसार उसके लिए मरघट के समान हो जायेगा। अप्रैल–जून 1993 के अंक में इंदिरा राठौर की कविता 'औरत' की यह पंक्तियां –

"औरत, नास्तिक नहीं होती कभी
मंदिर मस्जिद गिरजे में
माथा टिकाती है वह
चाहती है सब फूले फले, खुश रहे घर के लोग"[2]

अगर देखा जाए तो नारी कहीं की भी रहने वाली हो, उसका संपूर्ण जीवन संघर्षमय होता है, लेकिन पर्वतीय क्षेत्रों की ग्रामीण परिवेश में रहने वाली नारी का संघर्ष कुछ ज्यादा ही होता है। भोर की पहली किरण के साथ ही दिन भर का उसका संघर्ष आरंभ हो जाता है, घर के आंगन की सफाई से लेकर घर के बुजुर्गों की दवाई– भोजन को समय पर देने का कार्य, सब इन ग्रामीण महिलाओं के ही हिस्से आता है। वास्तव में अगर देखा जाए तो इन पहाड़ों को सौंदर्य इन्हीं महिलाओं के कारण मिलता है, आज लोग पहाड़ से पलायन रोकने की बात करते हैं, क्योंकि वह चाहते हैं की पहाड़ हरे– भरे आबाद रहे। पहाड़ी संस्कृति कहीं विलुप्त ना हो जाये।लेकिन इस पहाड़ी संस्कृति और पहाड़ों की सौंदर्य हरे– भरे खेतों को बनाने में एक स्त्री का संपूर्ण अस्तित्व समाप्त हो जाता है। यह इन पहाड़ी औरतों की ऊर्जा ही है जिससे यह पहाड़ अभी तक बचे हैं। जुलाई सितंबर 1997 के अंक में दिनेश उपाध्याय की कविता 'पहाड़ की तुम सब' में पहाड़ की रहने वाली महिलाओं के इसी संघर्ष को स्वर दिया गया है –

"सिर ढांके आंचल से, हजारों दुखों को जज्ब किए
बर्फीले हिमालय से मुस्कुराती
ओ पहाड़ के गांवों में रहने वाली तुम सब
कैसे परिभाषित करूं तुम्हें?"[3]

पर्वतीय स्त्री के जीवन की यह विडंबना है कि इसके जीवन में प्रतीक्षा की घड़ियां कभी समाप्त नहीं होती, युवावस्था से ही जब वह विवाह कर ससुराल जाती है तो उसका पति धन कमाने के लिए परदेस चला जाता है । लेकिन बीतते समय के साथ–साथ यह इंतजार बढ़ता ही जाता है । बच्चे भी बड़े हो जाते हैं लेकिन उसका इंतजार समाप्त नहीं हो पाता। अपने पति के इंतजार में इन स्त्रियों के मन में केवल एक ही प्रश्न उठता है कि तुम घर लौट के कब आओगे, हमें तुम्हारे धन ही नहीं तुम्हारी भी आस है। अक्टूबर दिसंबर 1994 के अंक में प्रकाशित गीता गैरोला की कविता 'आस' पर्वतीय नारी की यही पीड़ा सामने लाती है –

"खूब फूला है बुरांस जंगल में,
आलू का पेड़ लदा है फूलों से,
तुमने कहा था जब फूलेगा बुरांश आडू
तुम आओगे घर।"[4]

माँ मानव जीवन का सबसे सुंदर शब्द है , वह माँ ही होती है जिसके त्याग और तपस्या से बच्चे अपना स्वरूप प्राप्त करते है। अपने बच्चों की खुशी के लिए माँ को अनगिनत कष्ट सहने पड़ते हैं लेकिन फिर भी कभी वो इसका एहसास अपने बच्चों को नहीं कराती। एक बच्चे के लिए उसकी माँ ही उसकी दुनिया होती है। नारी अधिकारों के पक्ष में बोलने के साथ–साथ एक माँ के प्रति संवेदनाएं की अभिव्यक्ति भी 'उत्तरा' की कविताओं में दिखाई पड़ती है। माँ के प्रति अपनी भावनाओं को व्यक्त करने वाले कवियों ने रिचा त्रिवेदी, प्रदीप पांडे, ज्योति तिवारी, स्वाति पांडे, गीता गैरोला, शेर सिंह बिष्ट, दिवा भट्ट तथा मंगलेश डबराल आदि उल्लेखनीय हैं। जनवरी–मार्च 2000 के अंक में प्रकाशित 'दीवा भट्ट' की कविता 'माँ' की ये पंक्तियां माँ के प्रति उनकी भावनाओं को बहुत सुंदर ढंग से सामने लाती हैं–

"जल है माँ/ प्राणवायु है माँ
प्रातः की प्राची/ संध्या की पश्चिम है माँ
रात्रि का आकाश/ दिवस की छाती है माँ।"

उत्तराखंड से हिंदी के प्रसिद्ध कवि मंगलेश डबराल ने पहाड़ी जीवन में अपनी माता के संघर्ष को देखा है, जिसे उन्होंने जनवरी–मार्च 2021 में प्रकाशित अपनी कविता 'मां की तस्वीर' में पंक्तिबद्ध किया है–

"घर में मां की कोई तस्वीर नहीं
जब भी तस्वीर खिंचवाने का मौका आता है
मां घर में खोई हुई किसी चीज को ढूंढ रही होती है।"

आज का समाज शिक्षा का महत्व समझता है। शिक्षा व्यक्ति को संवेदनशील बनाने का कार्य करती है। एक शिक्षित समाज से अपेक्षा रखी जाती है कि उसमें किसी के साथ गलत ना हो तथा सबको समान अधिकार प्राप्त हों। अभी तक नारी अपने संवैधानिक हक से अनभिज्ञ थी किंतु आज शिक्षा ने उसे जागरूक बनाया है। सभी इस तथ्य को स्वीकार करते हैं कि जिन महिलाओं का शोषण सदियों से होता रहा वे अब चुप नहीं रहेंगी, अब वे अपनी जिंदगी को नया आकार देंगी और अत्याचार या अन्याय से खुलकर लड़ेंगी, अब वे घर तथा रसोई की सीमा पर ही बंधकर नहीं रहेंगी। बल्ली सिंह चीमा की कविता 'औरतें' की यह पंक्तियां उल्लेखनीय हैं–

"यह अभावों से उलझती, काम करती औरतें,/अब अंधेरे में मसालें बन जलेंगी औरतें,
बंध रही है संगठनों में, लड़ रही अन्यायों से/जिंदगी को अब नया आकार देंगी औरतें।"[5]

सामाजिक परंपरा से विद्रोह की कविताएं

मानव समाज का इतिहास प्रत्येक देश, काल, जाति में महिलाओं को अधिकार, शक्ति और प्रभुता से दूर रखने का इतिहास है। पितृसत्तात्मक अथवा पुरुष प्रधान व्यवस्था के कारण स्त्रियों को घर गृहस्थी व बच्चों के लालन–पालन तक ही सीमित कर दिया जाता है। किंतु समाज इस सच्चाई को भुला देता है कि शताब्दियों से दोयम दर्जे की माने जाने वाली स्त्री के बिना इस संसार की कल्पना भी नहीं की जा सकती। स्त्री शरीर से इस संसार में जन्म लेने वाला पुरुष प्रधान समाज उसे वह सम्मान नहीं देता जिसकी वह हकदार है। सदियों से उसके ऊपर किये जाने वाले अत्याचार, शोषण के खिलाफ उसके मन में आक्रोश समाया हुआ है वह परंपरा से विद्रोह करना चाहती है, अपने बुनियादी अधिकारों तो प्राप्त करना चाहती है। सामाजिक, सांस्कृतिक, आर्थिक, राजनीतिक या सामूहिक इन सभी स्तरों पर वह सशक्त बनना चाहती है।आज की नारी संबंधों के जाल में नहीं बंधना चाहती है, सामाजिक परंपराओं के नाम पर उसके पैरों में पड़ी बेड़ियों को वह तोड़ देना चाहती है ,और किसी को भी अपने अस्तित्व से खेलने नहीं देना चाहती है। जनवरी–मार्च 1994 के अंक में प्रकाशित 'अमिता' की कविता 'वयस्क होता मन' की ये पंक्तियां नारी के परंपरा से विद्रोह को दर्शाती हैं–

"जीवन की सुगंधि से सराबोर होती मैं/टूटूँगी नहीं
हर बार तुम्हारी गरज पर/कांपना छोड़ दिया है मैंने।
बहुत ठगा है तुमने मुझे/सिंदूर चूड़ी का वास्ता देकर
तुम मेरे दुश्मन तो नहीं/इतने अपने होकर भी यह खलनायक क्यों।"

युगों किए जाने वाले से अत्याचार, प्रहार से स्त्री अब थक चुकी है अब उसकी सहनशीलता जवाब दे चुकी है। कभी शारीरिक प्रताड़ना के रूप में,कभी किए जाने वाले अपमान के रूप में, कभी उपहास के रूप में लगातार उस पर प्रहार होते रहे हैं। अभी तक वह सहन करती रही है लेकिन अब इन सब का विरोध करेगी। कोई उसका अपमान करेगा तो है तो वहा उसे उसका मुंहतोड़ जवाब देगी। जुलाई– सितंबर 2000 के अंक में प्रकाशित अमिता की कविता 'मत भूलो' की ये पंक्तियां नारी की इसी सामर्थ को व्यक्त करती हैं–

"हर बार प्रहार करते तुम हथोड़ा होते हो
और मैं इस्पात बन जाती हूं, मेरे संकल्प को मत आंको
मत भूलो छोटी कील बन धंस जाऊंगी
तुम्हारे पथरीले कलेजे में।"[6]

आज की पढ़ी लिखी स्त्री के मन में परंपरा से विद्रोह का भाव है इसलिए आज की स्त्री समाज को यह बता देना चाहती है कि वह महज घर –परिवार को चलाने वाली एक ब्याहता या गृहणी ही नहीं है अपितु औरतों के प्रति किए जाने वाले अत्याचार, दुर्व्यवहार के कारण क्रोध से उबलते विचार रखने वाली एक जीवित इंसान भी है ना की किसी के हाथ की कठपुतली। इसलिए वह सामाजिक बंधन के प्रतीकों को भी अपनाने से इंकार कर देती है। जुलाई सितंबर 2004 के अंक में प्रकाशित अमिता की कविता 'हम औरतें' की यह पंक्तियां उदाहरण स्वरूप प्रस्तुत है–

"हम औरतें महज सिंदूर मंगलसूत्र
बेलन थाली चिमटा और/नाक की नथ की नहीं है,
हम गुस्से से खोलती विचारों से लैस एक जीवित इंसान हैं।"[7]

अन्य सामाजिक चेतना की कविताएं

चेतना मानव मस्तिष्क का वह गुणधर्म है जिसके द्वारा हमें अपने आसपास की घटनाओं का बोध होता है। धार्मिक सामाजिक सांस्कृतिक राजनीतिक आर्थिक तथा समाज में प्रचलित परंपरागत मूल्यों की संदर्भ में जो नया बोध जागृत होता है उसकी समझ और विश्लेषणात्मक शक्ति का नाम सामाजिक चेतना है। उत्तरा महिला पत्रिका में प्रकाशित होने वाली कविताओं में न केवल महिलाओं के अधिकारों की बात होती है अपितु सामाजिक चेतना की अभिव्यक्ति भी इन कविताओं के माध्यम से की गई है जिसमें समाज में घटित होने वाली अनेक घटनाओँ के प्रति उत्तरा के कवियों ने अपनी हृदय की संवेदनाओं को अभिव्यक्त किया है। इन कविताओं में अतुल शर्मा की कविता 'पानी' उल्लेखनीय है जो उत्तरा पत्रिका के अप्रैल–जून 2015 के अंक में प्रकाशित हुई, जिसमें उन्होंने नदी तथा पानी पर होने वाली सियासत को सामने लाने का प्रयास किया है।

"बहता हुआ पानी/छोटे–बड़े स्रोतों का पानी
पानी पर सियासते करते लोगों पर/तरस खाता है,
मुस्कुराता हुआ पानी।"

हमारे भारत की पहचान गांवों से है,वहां का प्राकृतिक वातावरण, खेत– खलिहान, वहां की संस्कृति, वहां के खुले आंगन, यह सब बातें हमारे देश की प्राकृतिक विरासत को सहेजती हैं। लेकिन आज आधुनिकता के दौर में सभी लोग सुख– सुविधाओं के लिए अपने गांव को त्याग कर शहरों की ओर दौड़ रहे है। गांव के गांव खाली हो रहे हैं। गांव में पीपल के पेड़ के नीचे लगने वाली चौपाले नहीं दिखाई देती। आंगन में फुदकने वाली गौरैया कहीं गुम हो गई है,आज परिवारों में वह अपनापन नहीं दिखाई देता जो पहले होता था। आज के समाज का स्वरूप धीरे–धीरे विकृत सा होता जा रहा है। भारतीय समाज के इस बदलते स्वरूप पर ही अप्रैल–जून 2013 के अंक में प्रकाशित उषा नौटियाल की 'गजल' की इन पंक्तियों ने आधार ग्रहण किया है.

"गांव खाली हो गये, बढ़ने लगी शहरों की भीड़।
कट गए पीपल कि वह ताजी हवा गुम हो गई।।"

विगत कुछ वर्षों में प्राकृतिक आपदाओं ने भारत को झकझोर के रखा है लगातार कुछ ना कुछ ऐसी घटनाएं हो ही जातीं हैं जिसमें बहुत सी जान– माल का खतरा हो जाता है। इसी प्रकार कुछ समय पूर्व केदारनाथ में भारी भूस्खलन एवं बाढ़ के कारण बहुत से लोगों को अपने जान गंवानी पड़ी। केदारनाथ तीर्थ यात्रा के लिए गए हजारों यात्रियों को जान से हाथ धोना पड़ा, लेकिन इसके पीछे किसकी गलती है? अप्रैल–जून 2014 केअंक में दिनेश उपाध्याय ने अपनी कविता 'खतरे के बावजूद' में इसी विषय को सामने रखा है कि आपदायें तो हमेशा से आती रही हैं और आती ही रहेंगी लेकिन इतने अधिक लोगों की जान जाने का कारण यह है कि ट्रैवल एजेंसी,कैटरिंग, रिजॉर्ट तथा पूजा दक्षिणा और प्रसाद वाले अपने स्वार्थों के कारण खतरे को भांपते हुए भी इन यात्रा करने वालों को सचेत नहीं करते। अब यह तीर्थ यात्राएं भी एक व्यापार की तरह करवाई जाती हैं। जिस कारण प्राकृतिक रूप से संवेदनशील इन स्थानों में होने वाली दुर्घटनाओं में बहुत अधिक जान– माल का नुकसान हो जाता है।

"आपदाएं आती थी, हैं और रहेंगी/यही सत्य है यही चलेगा
जो जीवित है वह मरेगा/ पर तुम लालची इच्छाओं पर वार दिए गए तुम मरे नहीं मार दिए गए।"[8]

आज हमारी सामाजिक व्यवस्था में महिलाओं का प्रतिनिधित्व निर्धारित करने के लिए महिला आरक्षण की व्यवस्था की गई है

जिसमें गांव, कस्बों के विकास में महिला प्रतिनिधियों का चुनाव किया जाता है। किंतु इस व्यवस्था में भी कमियां व्याप्त है, ऐसी स्त्रियों को प्रतिनिधि के रूप में चुन लिया जाता है जो खुद के निर्णय लेने में भी समर्थ नहीं हैं, उनके खुद की परिवार में उनका कोई सम्मान नहीं करता। वह कैसे एक गांव के विकास में अपनी भूमिका निभा पाएंगी। उन की आड़ में उनके पति अपनी दादागिरी दिखाते हैं, इन महिला सरपंचों से जबरदस्ती अपनी इच्छा अनुसार कार्य करवाते हैं,प्रधान पति कहलाते हैं और सरकारी धन का दुरुपयोग करते हैं। यह स्थिति किसी भी समाज के लिए अच्छी नहीं कही जा सकती। व्यवस्था की इन्हीं खामियों पर नजर डालती है अप्रैल–जून 2007 के अंत में प्रकाशित 'रीता हजेला' की कविता 'सरपंची'–

"ननदी के वीरा को सौंपकर सरपंची,
कैसे सुनिश्चित कर ली तुमने स्त्री की प्रगति
घूंघट की ओट से टेक कर अंगूठा
किस भांती निर्धारित कर ली/गांव के विकास की गति।"

भारतीय समाज में सांप्रदायिकता का जहर घुलता जा रहा है। सहिष्णुता समाप्त होती जा रही है। वर्तमान राजनीतिक व्यवस्थाएं भी ऐसी हो गई है कि इन सांप्रदायिक दंगों को भड़का कर वोट बैंक की राजनीति को साधा जाता है। समय–समय पर इतिहास के उन पन्नों को खंगाला जाता है जिनसे लोगों के मनों में धार्मिक, सांप्रदायिक रूप से वैरभाव को बढ़ाया जाए और राजनीतिक रोटियां सेकीं जाएँ। जनवरी–मार्च 1991 के अंक में प्रकाशित 'अदम गोंडवी' ने अपनी ग़ज़ल में राजनेताओं के द्वारा की जाने वाली साजिश को सामने लाने का प्रयास किया है । उनके ग़ज़ल की कुछ पंक्तियां प्रस्तुत हैं.

"हिंदू या मुस्लिम के एहसासात को मत छेड़िए/अपनी कुर्सी के लिए जज्बात को मत छेड़िए,
हममें कोई हूण, कोई शक, कोई मंगोल है, /दफ्न है जो बात अब उस बात को मत छोड़ छेड़िए।"

निष्कर्ष

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि 'उत्तरा महिला पत्रिका' में प्रकाशित कविताएं इस पत्रिका के प्रमुख प्रतिपाद्य को सामने रखकर लिखी और प्रकाशित की गई है। विस्तृत फलक पर आधारित इन कविताओं के माध्यम से नारी चेतना एवं नारी सशक्तिकरण की भावना को बल मिलता है। 'उत्तरा महिला पत्रिका' में प्रकाशित कविताएँ नारी जीवन की व्यथा. व्याप्त संघर्षों, पीड़ाओं को बहुत अधिक गहराई से अनुभव करने के परिणाम है। युगों से नारी को अपने जीवन में अनेक अग्नि परीक्षाओं से गुजरना पड़ा है, दुनिया के लोगों ने उसे सदैव से पीड़ा ही पहुंचाई है, जिस कारण नारी दृष्टिकोण से सामाजिक जीवन में व्याप्त परंपराओं,आपसी संबंधों, दुनियादारी आदि से मोहभंग की अभिव्यक्ति भी इन कविताओं में दिखाई देती है। 'उत्तरा महिला पत्रिका' में लिखी जाने वाली कविताएं परंपरा एवं शास्त्रीयता से अलग यथार्थ जीवन की अनुभूतियों को लेकर लिखी जा रही हैं, इन कविताओं में विचारों की प्रधानता है। विचारों की प्रधानता होने के कारण गद्यात्मकता इन कविताओं की प्रमुख विशेषता है। इसके साथ ही भावात्मकता कविताओं का प्राण होता है, बिना भावों के कविता लिखना संभव ही नहीं है इसलिए भावात्मक शैली भी इन कविताओं की प्रमुख विशेषता है।साथ ही ये कविताएं जहां एक और नारी विमर्श को अभिव्यक्ति प्रदान करती हैं वहीं सामाजिक और राजनीतिक क्षेत्र में घटित होने वाली विसंगतियों की ओर भी ध्यान आकर्षित करती हैं।

संदर्भ सूची

1. Þvad & Uttara Mahila Patrika & mÙkjk efgyk if=dk-Þ https%@@www-uttaramahilapatrika-com@uttara&mahila&patrika&online@- Accessed 14 Jul- 2022-
2. राठौर, इंदिरा. "औरत" अंकित होने दो उनके सपनों का इतिहास. देहरादूनः समय साक्ष्य प्रकाशन, 2021, पृष्ठ संख्या 64
3. उपाध्याय, दिनेश. "पहाड़ की तुम सब"विरासतों के साए से निकलकर. तल्ला डांडा नैनीतालः उत्तरा प्रकाशन,2003 पृष्ठ संख्या 100.
4. गैरोला गीता. "आस" विरासतओं के साए से निकलकर. तल्ला डांडा नैनीतालः उत्तरा प्रकाशन, 2003 पृष्ठ संख्या 46
5. चीमा, बल्ली सिंह."औरतें" विरासतों के साए से निकल कर. तल्ला डांडा नैनीतालः उत्तरा प्रकाशन, 2003 पृष्ठ संख्या115.
6. अमिता. "मत भूलो" उत्तरा महिला पत्रिका.तल्ला डांडा नैनीतालः उत्तरा प्रकाशन, जुलाई– सितंबर 2000.
7. अमिता. "हम औरतें" उत्तरा महिला पत्रिका.तल्ला डांडा नैनीतालः उत्तरा प्रकाशन, जुलाई– सितंबर 2004.
8. उपाध्याय दिनेश. "खतरे के बावजूद" उत्तरा महिला पत्रिका. तल्ला डांडा नैनीतालः उत्तरा प्रकाशन, अप्रैल–जून 2014.